E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

अष्टाङ्गहृदय

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

आयुर्वेदके प्राचीन आचार्यों में तीन आचार्यों की गणना सर्वोपरि है- चरक, सुश्रुत एवं वाग्भट। इन तीनों के तीन ग्रन्थ बृहत्त्रयी के नाम से आयुर्वेद-जगत् में विश्रुत हैं और विशेष बात यह है कि तीनों ग्रन्थ इतने विख्यात हैं कि रचनाकार के नाम से उनका बोध हो जाता है। आचार्य चरक की चरकसंहिता, आचार्य सुश्रुत की सुश्रुतसंहिता और वाग्भट मात्र कहने से 'अष्टाङ्गहृदय' का स्मरण हो आता है।

आचार्य वाग्भट का ग्रन्थ 'अष्टाङ्गहृदय' नाम से प्रसिद्ध है। आचार्य वाग्भट के पिता का नाम सिंहगुप्त था, जो वैद्यपति कहलाते हैं। कतिपय विद्वानों का परामर्श है कि इनका जन्म सिन्धु देश में हुआ था और इनके गुरु अवलोकितेश्वर थे तथा इनका समय लगभग छठी शती के आसपास का है।

आचार्य वाग्भट का मुख्य ग्रन्थ अष्टाङ्गहृदय है। जैसा कि इसके नामसे ही स्पष्ट है कि इसमें आयुर्वेदके काय, शल्य, शालाक्य आदि आठों अङ्गोंका विवेचन हुआ है। इसकी व्युत्पत्तिमें स्वयं आचार्यका कहना है-**'हृदयमिव हृदयमेतत्सर्वायुर्वेदवाङ्मयपयोधेः'**।इसका भाव यह है कि यह ग्रन्थ समुद्ररूपी आयुर्वेद के हृदयके समान है। जैसे शरीरमें हृदय की प्रधानता है, उसी प्रकार आयुर्वेदवाङ्मय में यह अष्टाङ्गहृदय 'हृदय' के समान है। यह उक्ति अत्यन्त सत्य प्रतीत होती है।

अपनी विशेषताओं के कारण यह ग्रन्थ अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है तथा इसका प्रचार भी बहुत हुआ है। पूरा ग्रन्थ सूत्रस्थान, शारीरस्थान, निदानस्थान, चिकित्सास्थान, कल्पस्थान तथा उत्तरस्थान आदि में विभक्त है। इसपर जितनी टीकाएँ हुई हैं, उतनी सम्भवतः वैद्यकशास्त्र के किसी अन्य ग्रन्थपर नहीं हैं। अनेक भाषाओं में इसके अनुवाद हैं। यह ग्रन्थ आयुर्वेद का सारसमुच्चय है।

आचार्य वाग्भट का कहना है कि इस ग्रन्थमें कोई कपोलकल्पित बात नहीं कही गयी है। पूर्वाचार्यों, विशेषतः चरक, सुश्रुत आदि के अभिमतों का अनुसरण हुआ है, अतः मन्त्रवत् इसका प्रयोग करना चाहिये-**'मन्त्रवत्सम्प्रयोक्तव्यं न मीमांस्यं कथञ्चन'**।

इतना ही नहीं, आचार्य वाग्भट बड़े विश्वास से कहते हैं कि इस ग्रन्थ के पठन, मनन एवं प्रयोग करने से निश्चय ही दीर्घ-जीवन, आरोग्य, धर्म, अर्थ, सुख और यश की प्राप्ति होती है-

दीर्घं जीवितमारोग्यं धर्ममर्थं सुखं यशः।
पाठावबोधानुष्ठानैरधिगच्छत्यतो ध्रुवम्।।

आचार्य वाग्भट ने नातिसंक्षेप नाति विस्तर (न बहुत संक्षेप न बहुत विस्तार) शैली पर इस संहिताग्रन्थ की रचना की है। ग्रन्थ के आदि में इन्होंने लिखा है कि अग्निवेश आदि आचार्यों ने अलग-अलग अपनी संहिताएँ बनायी। उनमें फैले हुए विषयों का संकलन कर, उनके सारभाग को संगृहीत कर ग्रन्थ की रचना की जा रही है। वाग्भट ने कायचिकित्सा और शल्य के उपयोगी सभी अंशों का सन्निवेश कर यह प्रयत्न किया है कि इस एक ग्रन्थ के अध्ययन से चिकित्सक संपूर्ण आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर ले ।

आचार्य वाग्भट ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा प्रणीत संहिता ग्रन्थों के पठन-पाठन की गम्भीरता को ध्यान में रखकर प्रयोगात्मक एवं व्यावहारिक शैली पर अपने ग्रन्थ की रचना की है। इसके अध्ययन में बोझ नहीं मालूम होता है। विषयों के वर्णन का प्रकार सरल है। संक्षेप में थोड़े शब्दों में बहुत-सी बातें कह दी गई हैं। अल्पमेधावी व्यक्ति मूल के अध्ययन से काम चलाऊ ज्ञान प्राप्त कर सकता है और विद्वज्जन उन शब्दों के अर्थ-गाम्भीर्य के विमर्श में अपनी प्रतिभा का प्रयोग कर बहुत से ज्ञानरत्न प्राप्त कर सकते हैं। जो व्यक्ति दुरूह दार्शनिक विषयों के आवर्त में पड़े हुए मूल आयुर्वेद के विषयों को उनके आवरण से निकालकर हृदयङ्गम करने में समर्थ नहीं हैं, उन्हें सीधे अष्टाङ्गहृदय के मार्ग का अवलम्बन करना चाहिए। यह सर्वबुद्धिगम्य, लोकोपयोगी शास्त्र है और आसानी से इसे समझा जा सकता है।

दक्षिण भारत में आज भी अष्टाङ्गहृदय सर्वाधिक प्रचलित तथा लोकप्रिय संहिता है, जिसे वहाँ के लोग रुचिपूर्वक अध्ययन कर आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त करते है। यह ग्रन्थ आयुर्वेद-क्षीरसागर से उद्धृत नवनीत है। इसमें चिकित्सा में उपयोगी सभी विषयों का यथोचित सन्निवेश किया गया है।

अष्टाङ्गहृदय की विशिष्ट उपलब्धियों में 'विपाक' का लक्षण उल्लेखनीय है। नेत्ररोगों में अनेक नये योगों का निर्देश है, जिनमें गन्धक, पारद तथा अन्य रसों या उपरसों का योग है। रसायन में नये द्रव्यों का प्रयोग बतलाया गया है।

वाग्भट कुलक्रमागत अधीतवैद्य एवं अनेक विषयों के उद्भट विद्वान् थे, अतएव वे आयुर्वेद के प्रति स्वयं भी अत्यन्त निष्ठावान् थे। यही कारण था कि उन्होंने सम्पूर्ण समाज को यह सन्देश दिया- **'आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः'**। अर्थात् धर्म, अर्थ, सुख (काम) नामक तीन पुरुषार्थों की प्राप्ति सुखायु से होति है। अतः इनकी इच्छा रखने वाले पुरुषों को आयुर्वेद के विश्वजनीन उपदेशों का पालन अत्यन्त आदर के साथ सदैव करते रहना चाहिए।

सरस्वती के वरसपुत्र वाग्भट द्वारा विरचित 'अष्टाङ्गहृदय' की समृद्ध काव्यसम्पदा से यह सुविदित है कि ये आयुर्वेदीय समस्त अङ्गों के ज्ञाता होने के साथ-साथ सुकवि भी थे तथा साहित्यशास्त्र पारावारपारीण भी थे। जो इनके छन्द, रस, अलंकार आदि से परिपूर्ण प्रस्तुत काव्यसम्पत्ति से प्रमाणित होता है।

अष्टाङ्गहृदय की शास्त्रीय विशेषताएं-

अष्टांगहृदय आयुर्वेद का सारसमुच्चय है जिसमें चिकित्सोपयोगी सभी तथ्यों का व्यावहारिक रूप में सन्निवेश किया गया है। यहाँ निदर्शनार्थ कुछ प्रमुख तथ्यों का उल्लेख किया जा रहा है-

१. द्रव्य-प्रकरण में कुछ नये और विशिष्ट द्रव्यों का उल्लेख किया गया है। हरितकवर्ग में आर्द्रिका का वर्णन है। गृञ्जनक का भी उल्लेख है। सुश्रुतोक्त तथा संग्रहोद्धृत वल्ली एवं कण्टक पञ्चमूल को हृदय में स्थान नहीं मिला। अग्र्य द्रव्यों का रोगानुसार ग्रन्थ के अन्त में उल्लेख किया है जिनमें अनेक हृदयकार की नवीन देन है यथा प्रमेह में आमलकी, प्लीहामय में पिप्पली, वातरक्त में गुडूची,

वातकफज विकारों में हरीतकी, बस्तिरोगों में शिलाजतु, छर्दि में लाजा, ज्वर में मुस्तापर्पटक, स्थौल्य में रसोञ्जन आदि। द्रव्यगुण के मौलिक सिद्धान्त के क्षेत्र में भी अष्टांगहृदय की मौलिक देन है।

२. दोषधातुमलविज्ञान के प्रकरण में, हृदय में धातुओं और मलों के एक-एक विशिष्ट कर्म का निर्धारण किया है। संग्रहकार ने रक्त को दोष और दूष्य दोनों माना है किन्तु हृदय में केवल दूष्य माना गया है।

३. हृदयकार ने स्नेहविधि-प्रकरण में सात सद्यः स्नेहन द्रव्यों का उल्लेख किया है जो संग्रह में नहीं है। स्वेद चार प्रकार का बतलाया गया है।

४. यन्त्रशस्त्र प्रकरण में, शल्यनिर्घातिनी नाडी तथा अश्मरीहरण यन्त्र का वर्णन है। शवच्छेद का वर्णन हृदय में नहीं है।

५. मूढगर्भप्रकरण में दो विष्कंभ नामक मूढगर्भ बतलाये गये हैं जो शस्त्रसाध्य हैं।

६. मर्मों के प्रकरण में एक धमनीमर्म का भी वर्णन किया है, इस प्रकार हृदय में षड्विध मर्म है।

७. चिकित्सा प्रकरण में, अनेक नये योगों का निर्देश किया है यथा अर्श में सूरणपुटपाक, अतीसार में दाडिमाष्टक चूर्ण, उदर में अयस्कृति, पाण्डु में मण्डूरवटक आदि।

८. नेत्ररोगों के लिए अनेक नये योग हृदय में मिलते हैं। तिमिर रोग में गन्धकयुक्त अञ्जन तथा पारदयुक्त अञ्जन विशिष्ट हैं। इनके अतिरिक्त, पाशुपत योग, ताम्र, तुत्थ, रसांजन, रीतिपुष्प, मनःशिला, समुद्रफेन और पुष्पकाशीश का बहुत प्रयोग है।

९. रसायन-प्रकरण में, संग्रहोक्त अनेक द्रव्यों को छोड़कर प्रचलित वाराहीकन्द, गोक्षुर, शुण्ठी आदि द्रव्यों का वर्णन किया है। वाजीकरण में उच्चटा का प्रयोग है।